॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु! हे मेरे जीवन के संचालक! तू आकर हमें तपस्वी बना। हमें योगी बना। प्रभु! अब मुझे किसी ने संकेत कराया है कि तू तपस्वी बन। हे प्रभु! मेरे जीवन में, मेरे हृदय में जो नाना प्रकार की त्रुटियाँ हैं, उन त्रुटियों को मुझ से दूर करो, मैं त्रुटिदायक नहीं बनना चाहता। प्रभु! मेरा जीवन आपकी कृति में हो, मेरा जो जीवन है, मेरी जो संकलन धारा है, वह आपकी कृति में होनी चाहिए।

सुन्दर यज्ञ करने को देव पूजा कहा जाता है, जिसमें देवताओं का आदर होता है, देवताओं के लिए हवि प्रदान करते हैं। यजमान की अवस्था सौ वर्षों की होनी चाहिए। हे परमात्मन! आप अधिक से अधिक अवस्था दीजिए, जिससे विधाता! हमारा जीवन सँसार में पवित्र बनता जाए, और हम अपनी मानसिक इन्द्रियों को सुन्दर करते चले जाएँ। हम परमात्मा की कृति को हम उस परमात्मा को प्रातः और साँयकाल धन्यवाद करते चले जाएँ, जिससे हृदय में मानसिक बल आता चला जाए और **जिस मानव के हृदय में मानसिक बल होता है वह किसी भी काल में रुग्ण नहीं होता, उसको किसी प्रकार का भी दुःखद नहीं होता।** वह सदैव एक रस बना रहता है। निर्द्वन्द बना रहता है, ब्रह्मचर्यता को ले करके चलता है, अग्नि को ले करके चलता है, प्रकाश को ले करके चलता है और उस प्रकाश में वह प्राणी रहता है, जिसके पश्चात् अन्धकार नष्ट होता चला जाता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 526 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 601
वर्ष : 44 44 समग्र वर्ष : 51

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2.	अनुक्रम		4
3.	याग के उद्गाता, अध्वर्यु	पूज्यपाद-गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द मुनि	5-19
4.	आत्म-ज्योति	पूज्यपाद-गुरुदेव	20-33
5.	ऋषियों के उद्गार		34
6.	Creation, and the Institution of National Order	Pujyapad-Gurudev	35-38
7.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

श्रावणी पर्व

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी प्रेरणा से रक्षाबन्धन के शुभावसर पर दिनाँक 18-8-2016, दिन बृहस्पतिवार को प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी लाक्षागृह, बरनावा में सामवेद ब्रह्म-पारायण महायज्ञ का आयोजन श्री गाँधी धाम समिति द्वारा आयोजित किया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

याग के उद्गाता, अध्वर्यु

जीते रहो!

देखो मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप मानो याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और वह उसी में वास कर रहा है। इसलिए उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। सँसार के एक-एक कण-कण में व्याप्त है और ये सँसाररूपी जो एक प्रकार की यज्ञशाला है। वेद का नेतृत्व करने वाले हैं और ये मानो उसी को संचालन करते हुए अपने में उसे धारण कर रहे हैं। तो हमारा वेद मन्त्र कहता है **यजम् भू ब्रहे कृत्त प्रवाहाः।** कि वे जो परमपिता परमात्मा जो यज्ञोमयी स्वरूप है मानो वह सर्वत्र विद्यमान रहते हैं। आओ उस परमपिता परमात्मा जो यज्ञोमयी स्वरूप है, जो पुरोहित है और पराविद्या के प्रसारण करने वाले हैं मानो वो उसी में रत्त रहने वाला है। जब ये सँसाररूपी यज्ञशााला का मेरे प्रभु ने निर्माण किया तो वे परमपिता परमात्मा स्वयं ब्रह्मा बने, आत्मा यजमान बन गया और ये पंचमहाभूत मानो देखो इनमें कोई होता, उद्गाता, अध्वर्यु के रूप में मानो होता के रूप में बेटा! दृष्टिपात आने लगा। तो मुनिवरों! ये सँसाररूपी यज्ञशाला का निर्माण हो गया। कैसी भव्य यह यज्ञशाला है, आत्मा कैसे यजमान बना हुआ है और वह परमपिता परमात्मा जो ब्रह्मा बन करके उद्गीत गा रहा है। वह उसी

के नेतृत्व में बेटा! ये ब्रह्माण्ड गति कर रहा है और वह गतिवान हो रहा है। तो इसलिए हम इस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर हमें विचार विनिमय करना चाहिए। मेरे प्यारे! वे परमपिता परमात्मा वह पुरोहित है और वे पराविद्या को प्रदान करने वाले हैं। पराविद्या कौन-सी है जिसके ऊपर हमें विचार विनिमय करना है। तो मुनिवरों! वह पराविद्या अपने में महान कहलाती है।

मानव प्रेरणा का स्रोत

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ विचार केवल ये कि हम यजम् ब्रह्मा! हम याग के सम्बन्ध में अपने उद्गीत गाएँ क्यों कहीं से हमें ये प्रेरणा प्राप्त हो रही है। क्योंकि प्रत्येक मानव परम्परागतों से प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है। प्रेरणा पाता रहता अपना विकास करता रहता है। प्रेरणा के आधार पर उसका क्रियाकलाप प्रारम्भ हो जाता है। तो मानो प्रेरित हो करके मुनिवरों! देखो! यह भव्यता को भव्यता में प्रवेश कर जाता है। तो इसी प्रकार आज हमें भी कहीं से ये प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि याग के सम्बन्ध ये कुछ विचार दिया जाए। मानो याग किसे कहते हैं? बेटा! यागाम् ब्रह्माः मुझे वो काल स्मरण आता रहता है मेरे पुत्रों! देखो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे परन्तु देखो अपने में कुछ यागों की चर्चाएँ हो रही थीं।

पण अकाल

मेरे प्यारे! देखो एक समय ऐसा आया कि अकाल पड़ गया और पण अकाल हो गया जहाँ अन्न इत्यादि न रहा। तो मुनिवरों! देखो महात्मा अर्धभाग अपने आसन पर विद्यमान थे। जब अन्न नहीं रहा तो अन्न के न रहने से बेटा! प्राणों की क्षति होने लगती है। जब प्राणों की क्षति होने लगी तो महात्मा अर्धभाग कहीं से भ्रमण करते हुए अपने

गृह में प्रवेश हुए और गृह में उनकी पत्नी सवृतिका बेटा! अपने में व्याकुल हो रही थी। उन्होंने कहा देवी क्यों? महात्मा अर्धभाग ने जब ऐसा कहा तो उनकी देवी ने कहा हे प्रभु! पण अकाल हो गया है अन्न नहीं प्राप्त हो रहा है। मेरा ये प्राण सखा जा रहा है मानो देखो स्मरण शक्ति जा रही है। उन्होंने कहा देवी मैं कहीं से अन्न लाता हूँ।

शूद्र की विवेचना

मेरे प्यारे! महात्मा अर्धभाग भ्रमण करते हुए वे एक स्थली पर पहुँचे तो एक हाथीवान मानो उड़द पान कर रहा था। जब वह उड़दों का पान कर रहा था तो उन्होंने कहा भिक्षामही देही। जब महात्मा अर्धभाग ने भिक्षामही देही कहा उन्होंने बेटा! उसने अपने कृति में से मानो उड़दों को, माँ को उन्होंने प्रदान किया और ये कहा भगवन्! लीजिए। उन्होंने अपने में धारण कर लिए और वो मेरे प्यारे! वहाँ से भ्रमणम् क्रताम्। महात्मा अर्धभाग से हाथीवान ने कहा प्रभु जल भी प्राप्त करोंगे? तो उन्होंने कहा कि तुम शूद्र हो। जब ये शूद्र का वाक् उन्होंने उच्चारण किया तो मुनिवारों! देखो शूद्र कहते ही हाथीवान बोले कि प्रभु! मेरे जो उर्द हैं उन उर्द में तो मैं शूद्र नहीं हूँ परन्तु मैं जल में कैसे शूद्र हो जाऊँगा? तो महात्मा अर्धभाग ने उसका उ त्तर दिया कि जो पर्याप्त वस्तु है जिसे मैं स्वतः मैं धारण कर सकता हूँ, ले सकता हूँ उसका अभाव नहीं है मानो देखो उसमें तुम जो प्रदान मुझे अपने आश्रित करना चाहते हो तो तुम शूद्र हो। मेरे प्यारे! देखो महात्मा अर्धभाग के उस वाक् को पान करके हाथीवान बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा हे प्रभु! मङ्गलम् ब्रह्मे उन्होंने कहा इस अन्न का अभाव है हम जब अकाल देखो अन्न अकाल ये जो पण अकाल आया है इसमें अन्न नहीं रहा है ये अन्न प्राणों की रक्षा करने वाला है। ये मन को ऊर्ध्वा गति बनाने वाला है और जो मानो देखो तुम्हारे जो उड़द हैं वह ऊप्रहाः उनका अभाव है, अन्न नहीं है।

मेरे प्यारे! देखो वहाँ से महात्मा अर्धभाग ने गमन किया। हाथीवान को त्याग करके बेटा! अपने गृह में प्रवेश हुआ और अपनी पत्नी से कहा देवी ये माँ पान करो। मेरे प्यारे! देखो वह उड़दों को पान करने लगीं प्राणों की रक्षा हो गयी।

महात्मा अर्धभाग का अश्वपति के याग में स्वागत

कहीं से बेटा! देखो महाराज को, महात्मा अर्धभाग को महाराजा अश्वपति के यहाँ से निमन्त्रित किया गया और वे निमन्त्रण आया याग के लिए। उन्होंने कहा देवी अब तुम्हारे प्राणों की रक्षा हो जाएगी। मानो वे महामना राजा अश्वपति के यहाँ मेरा पर्दापण हो रहा है मैं याग में जाऊँगा। मेरे प्यारे! देखो महात्मा अर्धभाग ने अपनी देवी से आश्वासन ले करके वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए मुनिवरो! देखो वे महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में पहुँचे और अश्वपति ने उनका बड़ा स्वागत किया, आसन दिया और आसन पर वे विराजमान हो गए। मेरे प्यारे! देखो यज्ञशाला का निर्माण हो गया था उन्होंने उद्गाता के आसन पर अपने आसन को ग्रहण किया। मेरे पुत्रों! देखो जब आसन पर विद्यमान हो गए। होताजन विद्यमान हैं ब्रह्मा इत्यादि उद्गाता, अध्वर्यु विद्यमान हैं।

उद्गाता के स्वरूप

मेरे पुत्रो! देखो उस समय महात्मा अर्धभाग ने उद्गाता के रूप में पर्दापण अपने आसन को उन्होंने ग्रहण किया। उन्होंने ब्रह्मा व्रते देवाः यजमान ने कहा या राजा ने कहा हे भगवन्, हे उद्गाता तुमने उद्गाता के आसन को लिया उद्गाता किसे कहते हैं? उन्होंने कहा प्रभु जो उद्गीत गाने वाला है और वह उद्गीत किसका गाता है जो वेद मन्त्रों को सुरों सहित गाने वाला है वह उद्गाता कहलाता है। मेरे पुत्रों! राजा ने जब ये वाक् श्रवण किया तो पुनः प्रश्न किया क्या हे उद्गाता तुम

उद्गाता के आसन पर विद्यमान हो और बिना मानो देखो बिना अनुमति लिए तुमने इस आसन को ग्रहण किया है ये उद्गाता कौन है? उन्होंने कहा ऐसा उद्गाता मानो सूर्य है जो बिना अनुमति के उदय हो जाता है और प्रकाश देता है और उद्गीत गाने लगता है। मानो देखो उद्गाता के रूप में वह उद्गायत्री रूपेण कहलाता है। मेरे प्यारे! राजा ने कहा हे अमृताम्, हे उद्गाता ये उद्गाता कौन है? उन्होंने कहा ये उद्गाता मानो देखो शरीर में उद्गाता के रूप में ये आत्मा है इसी के कारण ये उद्गीत गाने वाला है। दूसरे रूपों में ये प्राण है जो प्राण सखा मानो देखो गान गाने वाला है, ये दोनों ही उद्गीत गाते हैं। आत्मा का प्राण का जब तक समन्वय नहीं होता तब तक मुनिवरों! देखो कोई वाक् उच्चारण नहीं किया जाता। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा, महात्मा अर्धभाग ने कहा हे राजन्! इसलिए **उद्गीत गाने वाला आत्मा और प्राण है।** मेरे पुत्रों! देखो उन्होंने कहा हे उद्गाता तुम अपने आसन पर विद्यमान हो ये उद्गाता कौन है जो आसन पर विद्यमान है? उन्होंने कहा ये उद्गाता अपनी यज्ञशाला में विद्यमान है मानो उस उद्गाता का समन्वय चन्द्रमा से रहता है वो चन्द्रमा अमृत को बहाता रहता है। वह चन्द्रमा मानो देखो वह अमृत को प्रदान करता है तो क्योंकि वह अमृता कहलाता है और यह यज्ञशाला में विद्यमान है मानो देखो वही उद्गाता स्थिर रहने वाला है। मेरे प्यारे! देखो उस समय पुनः राजा ने कहा प्रभु आप मेरे सभी प्रश्नों का उत्तर देते जा रहे हैं मैं एक समय और प्रश्न करूँगा क्या प्रभु! ये उद्गाता कौन है जो यज्ञशाला का देखो वेद मन्त्रों का निध्यासन करने वाला है? उन्होंने कहा प्रभु ये उद्गाता जो मानो देखो अग्नि के स्वरूप में विद्यमान रहता है। अग्नि ही मानो प्रत्येक स्वाहा को अपने में निगल जाती है, अपने में धारण कर लेती है। तो मानो देखो वही उद्गाता के रूप में वायु के सम्पर्क से मुनिवरों! देखो उद्गीत गाती रहती है।

मेरे पुत्रो! देखो राजा तो मौन हो गए परन्तु देखो राजलक्ष्मी उनकी देवी ने कहा हे प्रभु! आप उद्गाता बने हैं? उन्होंने कहा हाँ दिव्या। उन्होंने कहा **ऐसा उद्गाता कौन है जो उद्गाता के रूप में विद्यमान रहता है?** उन्होंने कहा ऐसा उद्गाता परमपिता परमात्मा है जो मानो देखो सर्वत्र सँसार को क्रियाशील बनाने वाला है और वह क्रियाशील बना करके मानो देखो अपने में उद्गीत गा रहा है वह सर्वत्र विद्यमान रहने वाला है। जितना भी सँसार रूपी यह याग हो रहा है उद्गीत गाया जा रहा है परन्तु उसका नेतृत्व करने वाला परमपिता परमात्मा है।

याग का समन्वय

मेरे प्यारे! देखो उन्होंने उनकी देवी ने कहा हे भगवन् मैं ये जानना चाहती हूँ इस याग का किससे समन्वय रहता है? उन्होंने कहा इस याग का उद्गाता से क्योंकि यदि उद्गाता नहीं होगा तो याग पूर्ण नहीं होगा क्योंकि वह उद्गीत गाता है, स्वाहा कहता है और वेद मन्त्रों का उद्गीत गाता है तो उससे याग सम्पन्न हो जाता है उन्होंने ब्रह्मणे कृतधाः देखो उसका जो समन्वय है वे मानो देखो! सूर्य से होता है। सूर्य ऊर्ज्या देता है गान गाता रहता है वह अतिथि बन करके ही मानो देखो याग को अध्वर्यु के उद्गाता के रूप में पूर्ण करा देता है। मेरे प्यारे! देखो ऋषि देवी ने कहा प्रभु इसका मानव के जीवन से क्या समन्वय होता है? उन्होंने कहा जीवन में प्रकाश आता है, ऊर्ज्या आती है और तपस्या में तल्लीन हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो ऋषि पत्नि भी मौन गई, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु!

अध्वर्यु

मेरे प्यारे! देखो इतने में कहीं से उदेन ऋषि महाराज उदेन ऋषि महाराज का आगमन हो गया और उदेन ऋषि ने कहा हे भगवन्! आप याग कर रहे हो उद्गाता के रूप में विद्यमान हो परन्तु ये जो तुम

उद्गाता के रूप में विद्यमान हो तुम्हारे याग में अध्वर्यु किसे कहते हैं? उन्होंने कहा अध्वर्यु उसे कहते हैं जो हिंसा से रहित होता है। जो मानो देखो अहिंसक कहलाता है वही अध्वर्यु कहलाता है। जैसे राजा का नाम अध्वर्यु कहलाता है यदि राजा के राष्ट्र में हिंसा होती है तो अध्वर्यु नहीं कहलाता इसलिए राजा का नाम अध्वर्यु कहलाता है। अध्वर्यु या नाम ब्रह्मणे क्रोतक प्रव्हा राजन्ना वह राजा ही अध्वर्यु कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया अपनी आभा में मानव को प्रदान किया तो अध्वर्यु उद्गान ब्रह्मणे लोकाम् ब्रह्मा कृतम्। उन्होंने कहा ये होताजन याग हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो याग प्रारम्भ होने लगा उन्होंने अधूम कहते हुए याग का संचालन होने लगा। मेरे प्यारे! देखो जब याग प्रारम्भ होने लगा बहुत समय तक याग चला परन्तु साँयकाल को याग का जब सम्पन्नता के आँगन में प्रवेश हो गए तो महाराजा अश्वपति ने बेटा! सर्वत्र मुद्राएँ और अन्न इत्यादि को उन्हें प्रदान किया।

महात्मा अर्धभाग का गृह में आगमन

उस अन्न को ले करके महात्मा अर्धभाग ने बेटा! अपने गृह को प्रस्थान किया और अपनी देवी से कहा हे देवी लो ये मानो देखो मुझे याग में से अन्न इत्यादि को प्राप्त कराया है राजा ने इसे तुम पान करो। वे बड़ी प्रसन्न हुईं उन्होंने कहा प्रभु क्या यागाम् भूतप् प्रव्हाऽम् हे प्रभु! आपने बहुत ही प्रियतम क्योंकि मेरे प्राण पुनः से जा रहे थे और वे गमन कर रहे थे आपने मुझे अन्नाद का पान कराया। मेरे प्यारे! देखो वह अम्रताम् देवक ब्रह्मणाः वह अन्न मानो देखो अमृत है जो प्राणों की रक्षा करने वाला हो।

याग अपने में अद्वितीय

मेरे पुत्रों! देखो परमपिता परमात्मा जो सृष्टि का निर्माण करता है मानो जो अध्वर्यु के रूप में विद्यमान रहता है वह अधिपत्य व देवत्त्व

कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो वही तो अपने में धारण करता हुआ इस सँसार की प्रतिभा को अपने में धारयामि बना रहा है। तो विचार आता रहता है मेरे प्यारे! आज का विचार क्या? कि यागाम् ब्रह्मणे यागाम् रुद्र भागा अस्सुतम यागम् ब्रह्मणे कृतम् लोकाम् ये याग अपने में अद्वितीय कहलाता है। मानो देखो जो वायुमण्डल को पवित्र बना देता है और मानव मनोहितता को पवित्र बना देता है। हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहता है, कहीं वृष्टि याग है, कहीं पुत्रेष्टि याग है, कहीं वाजपेयी याग है, कहीं अग्निष्टोम याग है, कहीं रुद्र याग है, कहीं ब्रह्म याग है, कहीं विष्णु याग है। मेरे पुत्रों! देखो कहीं अजामेध याग है और कहीं मुनिवरों। देखो यहाँ अश्वमेध याग का वर्णन किया जाता है। तो भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में आता रहता है। तो आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ केवल विचार ये क्या याग के सम्बन्ध में मुनिवरों! देखो यागाम् हुतम् ब्रह्मणा लोकाम् वायु सम्भवा। तो आज का विचार अब मैं मुनिवरों! देखो सम्पन्न करने जा रहा हूँ। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

ओ३म् यथाः ब्रह्मणा लोकम् वर्णचस्मा दिव्याऽाम्

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अथवा मेरे भ्रद ऋषि मण्डल अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे मानो गागर में सागर भरण कर रहे थे। इनकी मनोनैतिकता ये रहती है कि मैं याग के सम्बन्ध में जितना उद्‌गीत गा सकूँ उतना गाऊँ। परन्तु आधुनिक कर्णम् ब्रहे कृतक मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ये अभी-अभी महात्मा अर्धभाग की गाथा के रूप में वर्णन करते हुए उन्होंने याग का प्रारम्भ किया और याग में अध्वर्यु उद्‌गाता और यजमान और ब्रह्मा इत्यादियों का वर्णन किया। इनके विचारों में सदैव एक महानता का दर्शन होता

रहता है। परन्तु आज मैं विशेष चर्चा नहीं केवल अपने पूज्यपाद गुरुदेव को मुझे कुछ उच्चारण करना है क्योंकि आज जो हमारी ये आकाशवाणी, हमारा ये जो विचार जा रहा है। जहाँ ये विचार जा रहा है मृत मण्डल में वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ। वहाँ मानो देखो यजुन्तहः एक याग को सम्पन्न किया गया। मेरा अन्तर्हृदय मानो सदैव यजमान के साथ रहता है।

वाम मार्ग

ये जो वर्तमान का काल चल रहा है भगवन्! ये एक ऐसा काल है जिसे हम वाम मार्ग कहते हैं। वाम मार्ग उसे कहते हैं जहाँ सुरा और सुन्दरी में मानो देखो सुरा में विशेष मानव की रुचि बन गयी, द्रव्य में विशेष रुचि बन गई है। कर्मणाथ धर्माथ काममोक्षां भूतम् ब्रह्मे इससे मानव वंचित होता जा रहा है। तो मार्ग तो है परन्तु देखो उल्टा मार्ग है और उल्टे मार्ग में गमन करने वाला ही वाम मार्ग कहलाता है। वाम मार्ग का अभिप्रायः ये है क्या जहाँ मानव भक्ष्य और अभक्ष्य पदार्थों का पान करने लगता है। विचार आता रहता है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराता रहता हूँ। मानो देखो आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है वह भी अन्धकार की प्रतिभा में मानो परिधि में गमन कर रहा है वह परिधि ही रूपों में अभ्योदय हो रहा है।

धर्म

जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ पनप रही हैं ये रूढ़ियाँ नष्ट होनी चाहिएँ परन्तु देखो राष्ट्रवाद ऐसा राष्ट्रवाद है जो नाना रूढ़ियों को नाना धर्म कहता रहता है। मैं ये कहता रहता हूँ कि **ये जो धर्म है एक वचन कहलाता है** ये मानो देखो बहुवचन नहीं होता। बहुवचन में रूढ़ियाँ आती हैं और एक वचन में धर्म आता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराते

हुए कहा क्या **ये जो धर्म है ये इन्द्रियों में समाहित रहता है।** प्रत्येक इन्द्रियों में देखो जो जिसका कर्म है जिस इन्द्री का वह उसका धर्म है और वे धर्म ही मानवीयत्व में सदैव निहित रहता है।

राजा

नाना प्रकार की रूढ़ियाँ मानो नहीं रहनी चाहिएँ। यदि राजा को अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है, महान बनाना है तो राजा के राष्ट्र में रूढ़ियाँ नहीं रहनी चाहिएँ। फिर रूढ़ियों के रूप में मुनिवरों! देखो मानवीयता अपने में गमन करने वाली है कृतियों में रत्त रहने वाली है। जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से ये कहता रहता हूँ हे पूज्यपाद ये मानो देखो राष्ट्रवाद क्या है? मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करने लगता हूँ तो राष्ट्रवाद एक स्वार्थपरता रह गई है, कर्त्तव्यवाद नहीं रहा है क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी वर्णन कराया कि अध्वर्यु नाम राजा का है और वह कौन-सा अध्वर्यु है जो जिसके राष्ट्र में देखो हिंसा न होती हो।

भगवान् मनु का राष्ट्र

हमारे यहाँ भगवान मनु ने सबसे प्रथम देखो जब राष्ट्र का निर्माण किया तो निर्माण करने के पश्चात् एक समय भगवान मनु देखो एक समय समुद्र तट पर स्नान करने के लिए पहुँचे। जब समुद्रों में स्नान किया स्नान करने के पश्चात् देखो उन्होंने मार्जन किया और मार्जन करके प्रभु का चिन्तन करते हुए उन्होंने अपने कमण्डलु को जल में परोक्षण किया तो उसमें एक मछली आ गई और वह मछली ने अपने वेदना में ही कहा राजा से क्या हे राजन्! मैं तुम्हारी शरण में आई हूँ, क्योंकि यहाँ प्रायः समुद्र में देखो विशेष मछली छोटी मछली को अपने में आहार कर जाती है। वे मानो देखो अपने में उदर की उदर परणित कर लेती हैं इसलिए मैं आपकी शरण में आई हूँ, मेरी रक्षा

करो। तो कहते हैं कि भगवान मनु कमण्डलु में मछली को ले आए और उन्होंने कुछ समय तक वह कमण्डलु में पनपती रही। कुछ समय के पश्चात् वही मछली मानो देखो गढेले में रही और वह मछली मुनिवरों! देखो बहुत प्रबल हो गयी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया क्या जब वह मछली प्रबल हो गयी, बलवती हो गयी, तो मछली ने ये कहा हे राजन्! अब मैं अपने समुद्र में गमन कर रही हूँ, और कुछ समय के पश्चात् जल प्लावन आएगा और जल प्लावन में देखो तुम एक नौका बनवा लेना और नौका में विद्यमान हो जाना और जब तुम्हारी नौका हिमालय से मिलान करेगी तो उस समय मेरे देखो मेरे से इस मौका को जकड़ देना तुम्हारे प्राणों की रक्षा जो जाएगी। मेरे प्यारे! देखो पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया था एक समय कि वह जल प्लावन जब जल प्लावन आया तो उस समय देखो यह पृथ्वी जल मग्न हो गयी और वह नौका महाराजा मनु ने नौका का निर्माण किया था। वह नौका में विद्यमान थे और वह नौका गमन करने लगी। जब वह हिमालय से जा करके अपना मिलन किया तो वह मछली उन्हें प्राप्त हुई और मछली से उन्होंने अपनी नौका को जकड़ दिया और जकड़ देने के पश्चात् वह अप्रताम् जल प्लावन शनैः-शनैः समाप्त होने लगा और वह नौका भी गमन करने लगी। परन्तु देखो नौका अपने में ब्रहेस्सतम और मछली अपने समुद्रों में गमन कर गई। तो विचार-विनिमय क्या कि हमारे यहाँ मछली से ले करके प्राणीत्व की जो रक्षा करता उसका नाम राजा है, वह अध्वर्यु है जो निर्माण देखों राष्ट्र का निर्माण करने वाला है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया क्या भगवान मनु ने सबसे प्रथम राष्ट्र का निर्माण किया था और राष्ट्र का निर्माण इसलिए क्योंकि मानो प्राणी अपने कर्तव्य से जब विहीन हो जाता है तो राष्ट्र का निर्माण होता है। और वो राजा अपने राष्ट्र में मानो देखो मनोनीतता लाता

रहता है और वो मनोनीतता ही मानवीयता कहलाती है और उससे मानव के देखो प्राणों की राजा रक्षा होती है।

राजा और राष्ट्र

जिस राजा के राष्ट्र में प्राण मानो देखो प्राणी प्राणी को भक्षण करता रहता है, सुरापान करता रहता है वह राष्ट्र मानो देखो राष्ट्र अग्नि के मुख में चला जाता है। जब राष्ट्र मानो राजा स्वयं हिंसक हो जाता है हिंसा में परणित हो जाता है तो राजा का राष्ट्र देखो आज नहीं तो कल नष्ट होता चला जाएगा। तो विचार आता रहता है मैं ये कहता रहता हूँ, हे राजन्! तुझे अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो त्याग और तपस्या में परणित होना है। हे राजन्! यदि तुझे अपने राष्ट्र को महान बनाना है तो ये भिन्न-भिन्न प्रकार की ईश्वर के नाम पर रूढ़ियाँ नहीं रहनी चाहिएँ क्योंकि जितनी रूढ़ियाँ रहेगीं उतनी ही राष्ट्र में मानो देखो राष्ट्र में अशान्ति रहेगी। एक प्राणी प्राणी को नष्ट करता रहेगा, विचारों में भिन्नता रहेगी। इसलिए देखो विचारों में एकोकीकरण करने के लिए राजा को अध्वर्यु बन करके देखो हिंसा से रहित हो करके और अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है। और राजा के राष्ट्र में ये रूढ़ियाँ कैसे समाप्त होती हैं? रूढ़ियाँ जब समाप्त होती हैं जब प्रत्येक रूढ़ियों के आचार्यों को राजा अपनी स्थली पर विद्यमान करता हुआ राजा ब्रह्मवेत्ता हो, वेद का ज्ञाता हो ज्ञान और विवेक उसमे समीप होना चाहिए और जब वह देखो उन आचार्यों के मध्य में विद्यमान हो करके शास्त्रार्थ होना चाहिए और विचार-विनिमय करते हुए देखो जो शास्त्रार्थ में देखो जो विचार विज्ञान और मानवीयता और धर्म पे जो स्थिर हो जाएँ उसको अपनाना है और राजा को अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना है। ऐसा मानो देखो वेद का आशय कहता है, आचार्यजन कहते हैं। तो विचार आता रहता है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये वर्णन कराता रहता हूँ, अपने विचार देता रहता हूँ क्या इस सँसार में देखो यदि राष्ट्र

को ऊँचा बनना है तो उसे ब्रह्मवेत्ता होना होगा अहिंसा से रहित मानो देखो हिंसा रहित होना होगा। अहिंसा में अपने को परणित करना होगा क्योंकि हिंसा ही मानव की मृत्यु है और अहिंसा ही मानव का जीवन माना गया है।

इसलिए देखो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे बहुत-सी वार्ताएँ प्रगट कराईं। मैं उनके वाक्यों की पुनरुक्ति करता रहता हूँ विचार देता रहता हूँ क्या हे राजन् अम्रतम् ब्रह्मे मेरा जो अन्तर्हृदय है वो यजमान के साथ रहता है। क्योंकि ये वाममार्ग का काल है यहाँ सुरा में और द्रव्य में मानव विशेषकर, देखो अपने को ले जाता जा रहा है और ये अमृता न रहकर के ये केवल देखो विष पान करता हुआ अपने जीवन को मृत्यु के आँगन में ले जा रहा है प्राणी। इसके मूल में राजा है। यदि राजा अपने जीवन को महान बनाना और राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहता है तो हिंसा को नष्ट कर देना चाहिए। जितने अभक्ष्य पदार्थ हैं उन पदार्थों को पान नहीं करना चाहिए। राजा का ये कर्तव्य है। तो मैं ये कह रहा हूँ ये वाम मार्ग का काल है जो वर्तमान का काल चल रहा है ये वाम मार्ग है। वाम मार्ग उसे कहते हैं जो उलटे मार्ग पर गमन करता है।

यजमान को आशीर्वाद

हे यजमान मेरा अन्तरात्मा तेरे साथ रहता है तू अपने द्रव्य का अपने गृह में सदुपयोग कर रहा है और दुरिता को अपने में शान्त कर रहा है मेरा अन्तरात्मा मानो तेरे साथ है। हे यजमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तू मानो देखो अपने मनोहृदय में पवित्रता को लाने में सदैव तत्पर रहे ऐसा मेरा सदैव, मन्तव्य रहता है और मैं विशेष विचार देने नहीं आता हूँ, केवल मैं केवल अपने हृदय की वार्ता और मेरे हृदय में जो उद्गार हैं उन उद्गारों को उद्गीत गाने के लिए आता हूँ। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपने बड़े विचित्र विचार राष्ट्र के सम्बन्ध में कि राष्ट्र कैसे उन्नत हो सकता है। इन्होंने बहुत प्रियता की वार्ता प्रकट की कैसे रूढ़ियाँ समाप्त हो सकती हैं। ये जो ईश्वर के नाम पर जो रूढ़ियाँ हैं कोई ईसा के मानने वाला है, कोई मौहम्मद के मानने वाला है और भी नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ हैं ईश्वर के नाम पर ये समाप्त होनी चाहिएँ और ये समाप्त जब होंगीं जब राजा स्वयं ब्रह्मज्ञानी बन करके और रूढ़िवादियों के आचार्यों के मध्य में विद्यमान हो करके वेद का शास्त्रार्थ हो उनके विचारों को श्रवण किया जाएँ और जो धर्म मानवता के ऊपर निर्धारित हो जाए उसको अपनाना चाहिए। मेरे प्यारे! महानन्द जी के हृदय में कितनी दाह है, कितनी विडम्बना है। ये मैं प्रभु से कहता रहता हूँ कि हे प्रभु ये विडम्बना शान्त होनी चाहिए और ये विडम्बना महानता में परणित हो जाए। समाज एक महानता का गीत गाने लगे और उन्होंने अपने हृदय को यजमान के साथ नियुक्त किया। तो आज का विचार-विनिमय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा की महती अनन्तता के ऊपर विचार-विनिमय करते रहें और देखो ये अपने हृदय से उद्गार जो राष्ट्रवाद है, भगवान मनु ने इसको निर्धारित किया इस राष्ट्रवाद को उन्नत बनाना यह हमारा कर्तव्य माना गया है और देखो धर्म मर्यादा में परणित रहना चाहिए और प्रत्येक शब्द के ऊपर विचार-विनिमय महानता में गमन करना चाहिए। जैसा अभी हम उच्चारण कर रहे थे कि परमपिता परमात्मा का ये जो ब्रह्माण्ड है ये एक प्रकार की यज्ञशाला है इसमें याग हो रहा है। इसमें प्रत्येक मानव याग कर रहा है। मेरी प्यारी माता याग कर रही है। ये सँसार रूपी याग देखो यज्ञशाला अपने में गतिवान है ब्रह्मा यजमान है और देखो ब्रह्मा ब्रह्मणे गुरुत्त्व उसमें बना हुआ है। आत्मा यजमान है। होतागण मानो ये पञ्चीकरण जो पञ्च महाभूत हैं और ये सर्वत्र अपनी-अपनी आभा में नृत्य हो रहा है।

कैसा मेरे प्यारे प्रभु का ये जगत है लोहाण ध्रुवांत प्रव्हे ये ध्रुवांश कहलाता है, मानो ये देखो यज्ञ की नाभि कहलाता है। यज्ञ ही देखो पृथ्वी की नाभि है जैसे माता की नाभि से बाल्य को अमृत प्रदान किया जाता है इसी प्रकार यज्ञशाला भी एक प्रकार की देखो पृथ्वी को नाभि है और ये नाभि बन करके सुगन्धि देता रहता है। ये सुगन्धित करता है वो अमृत देता है प्रभु का बड़ा विशाल ये विज्ञानमयी भवन है जिसके ऊपर हम सदैव अपनी विचारधारा प्रगट करते रहते हैं।

आज का विचार-विनिमय क्या कि हमारा परमपिता परमात्मा की महती अनन्तता के ऊपर विचार-विनिमय होना चाहिए। ये है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चा कल प्रगट करूँगा। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा।

ओ३म् ब्रह्म भा गश्चना आपा रथमं मान्यत्वाः।
ओ३म् मनु गायनत्वाः आपा रथम् ब्रह्मा गायाऽम्।।

दिनाँक : 3 जुलाई, 1989

समय : प्रातः 8 बजे

स्थान : ग्राम माकड़ी,
बुलन्दशहर

॥ ओ३म् ॥

आत्म-ज्योति

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह मेरा देव विज्ञानमय माना गया है। जितना भी ज्ञान और विज्ञान इस सँसार में दृष्टिपात आ रहा है, यह उस महान् मेरे प्यारे प्रभु की महत्ता है अथवा उसकी प्रतिभा है।

परन्तु आजका हमारा वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा था और उन प्रेरणाओं में से ''अभ्यम् गतिः वृण्श्यतम् देवम् अदितिः ऋषि। ब्रह्म ब्राह्मणाः कृतम् देवाः।'' वेद में इस प्रकार के नाना मन्त्र आते हैं। हमारे यहाँ नाना दार्शनिकों का जब समूह विद्यमान होता है तो नाना प्रकार का विचार-विनिमय भी होता रहता है क्योंकि इस सँसार के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की विचार धाराएँ मानव के मस्तिष्कों में होती रहती हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में बेटा! राजा जनक के यहाँ ब्रह्मयाग होता रहता था। यहाँ नाना प्रकार के यागों का वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे ब्रह्म-याग है, गो-मेध याग है, अश्वमेघ-याग है, वाजपेय-याग है, अग्निष्टोम याग है और भी नाना प्रकार के यागों का चयन अथवा वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। आज मैं यागों का प्रकरण अथवा उसकी आभा का वर्णन करने नहीं आया हूँ।

राजा जनक और उनकी पत्नी का चिन्तन

आज मैं तुम्हें कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय क्या? आज मैं तुम्हें पुत्रो! त्रेताकाल में ले जाना चाहता हूँ। आज मैं उस काल में ले जाना चाहता हूँ जहाँ ब्रह्मवेत्ताओं का समूह विद्यमान था और वहाँ ब्रह्म की विवेचना होती रहती थी और इस महान् जगत् के ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियाँ प्रारम्भ रहती थीं। बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में राजा जनक और उनकी पत्नी अपने यहाँ देव-पूजा करते रहे हैं। एक समय मध्यरात्रि में दोनों विद्यमान हैं और राजा जनक की पत्नी के एक वेद-मन्त्र स्मरण आया और वह वेद-मन्त्र कह रहा था ''हिरण्यम् ब्रह्मणो कृतम् बृहिः वृतम् चक्षुः ज्योतिः जिव्याहम् हिरण्यम् ब्रहेः प्रभाः।'' वेद के विचारकों के समीप ये वेदमन्त्र आता रहता है। अब जब ये राजा जनक की पत्नी के समीप आया, तो वे मध्य रात्रि में चिन्तन करने लगीं। उसने अपने देव से कहा, पति राजा जनक से कहा कि महाराज! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? यह वेदमन्त्र यह कह रहा है कि हमारे जो नेत्र हैं, हमारे जो चक्षु हैं वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान हो रहे हैं। मेरे प्यारे! राजा जनक और उनकी पत्नी बेटा! दोनों विचार-विनिमय करते थे। मध्यरात्रि से प्रातःकाल हो गया, वे अपने में इसका कोई निपटारा नहीं कर सके।

जब नहीं कर सके तो तो दोनों अपने आसन को त्याग करके, अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके जहाँ वे योग करते थे, प्रातःकालीन देव-पूजा करते थे वे देव-पूजा स्थली में जा पहुँचे और वे याग करने को जब विद्यमान हो गए, तो मेरे पुत्रो! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज जो राजा जनक के महान् आचार्य थे और गुरुजन थे, मेरे प्यारे! चाक्राणी गार्गी और वे महाराजा के पुरोहित और भी नाना ब्रह्मवेत्ता जैसे महात्मा दिग्गः, महर्षि प्रह्वाण, महर्षि दालभ्य, महर्षि रेवक, महर्षि क्रेतकेतु और भी नाना ऋषि बेटा! वहाँ विद्यमान थे। अब मुनिवरो!

देखो यजमान ने यह कहा कि आज मैं कोई भी प्रश्न आचार्य से नहीं कर पाऊँगा। मेरे प्यारे! देखो, वे याग करने लगे। जब अग्नि होत्र किया तो दोनों उपासना करने के पश्चात् राजा और उनकी पत्नी मौन हो गए, शान्त हो गए।

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और राजा जनक का सम्वाद

सूर्य का प्रकाश

राजा जनक को शान्त दृष्टिपात करके महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बोले, हे राजन्! हे यजमान! आज तुम मेरे से कोई प्रश्न कर सकते हो। वे दोनों अत्यन्त प्रसन्न हो करके बोले, कि हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? कौन इनका प्रकाशक है? कौन प्रकाश दे रहा है? तो मुनिवरो! जब उन्होंने ऐसा कहा तो राजा जनक के वाक्यों को पान करके ऋषि बोले, हे राजन्! इसको प्रत्येक मानव जानता है, प्रत्येक मेरी पुत्री जानती है, प्रत्येक बालक जानता है कि हमारे जो नेत्र हैं वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। **सूर्य हमारा अदिति कहलाता है, वह चक्षुओं का मित्र कहलाता है** और मानव उसी के प्रकाश से प्रकाशमान होता है। प्रातःकाल जब सूर्य उदय हो जाता है तो उसी के प्रकाश से प्रकाशित हो जाता है और वह प्रकाश देने लगता है। वह संसार का व्यापार, संसार का कार्य प्रारम्भ कर देता है। यह सूर्य अदिति कहलाता है, यह अदिति है, लोक-लोकान्तरों को तपाने वाला है। नाना पृथ्वियाँ इसके आंगन में तपती हैं। यह सूर्य जब प्रातःकाल में उदय होता है तो यह प्रकाश देता रहता है। इसी के प्रकाश से यह संसार प्रकाशमान होता रहता है। तो हे राजन्! देखो मानव को यह प्रकाश देता है। माता के गर्भस्थल में भी यह सूर्य ही प्रकाशक बना हुआ है और प्रकाश देता रहता है।

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि जैसे 'गौ' नाम का पशु है, 'गौ' नाम के पशु के रीढ़ के विभाग में एक **'सूर्यकेतु'** नाम की नाड़ी होती है, उसका ऊर्ध्व मुख होता है और जब सूर्य उदय होता है, सूर्य की किरणें आती हैं तो उन किरणों को वह नाड़ी अपने में आकर्षित कर लेती है। तो मेरे प्यारे देखो! जो स्वर्ण की मात्रा इसमें विशेष होती है, वह जो 'स्वर्णकेतु' नाम की नाड़ी है वह उसी को अपने में ग्रहण कर लेती है, उन परमाणुओं को अपने में सींच लेती है और वह जो 'गौ' नाम के पशु में नाना प्रकार के यन्त्रालय विद्यमान हैं उन यन्त्रालयों में वह परमाणु जाते हैं। गौ के दुग्ध घृत में मानो पीतवर्ण कहलाता है, पीतवर्ण इसीलिए होता है, क्योंकि उसमें स्वर्ण मात्रा विशेष होती है। हमारे आचार्यों ने, ऋषि-मुनियों ने 'गौ' नाम के पशु को बेटा! **आग्नेय-पशु** माना है, इसका सम्बन्ध सूर्य से विशेष रहता है।

विचार-विनिमय क्या? यह नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपाने वाला है, इस पृथ्वी, माता-वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार के खनिज को देने वाला है, खाद्य को प्रदान करने वाला है। मेरे प्यारे! पृथ्वी के गर्भस्थल में कहीं जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है, कही पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातु का निर्माण हो रहा है, कहीं स्वर्ण का पिपाद बनाया जा रहा है। ये सब सूर्य की प्रतिभा है। यह महान् सूर्य जो तप रहा है, चक्षुओं का मित्र बना हुआ है यह उसी की प्रतिभा कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा, हे राजन्! ऐसा जो सूर्य है, जो प्रातःकाल होते ही माता अपने पुत्रों को जागरूक कर देती है, कहती है, ''हे बालक! जागरूक हो जाओ सूर्य उदय हो गया है।'' मेरे प्यारे! ऐसा जो सूर्य है उसकी प्रतिभा, उसकी ऊषा आते ही पक्षीगण भी अपनी आभा का गुणगान गाने लगते हैं। ऐसा जो अदिति है, ऐसा जो सूर्य है मेरे प्यारे! वह इन चक्षुओं का मित्र कहलाता है।

चन्द्रमा का प्रकाश

राजा ने कहा, हे ऋषिवर! इसकी मीमांसा मैं विशेष नहीं चाहता हूँ, मेरी इच्छा यह है, मैं यह जानना चाहता हूँ, जब सूर्य नहीं होता तो हमारे नेत्रों का देवता कौन है? प्रभु! क्योंकि सूर्य तो अस्ताचल को चला जाता है उसके उपरान्त किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? मेरे प्यारे महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता ने कहा, हे राजन्! जब यह सूर्य नहीं होता तो चन्द्रमा से प्रकाशमान होते हैं। **यह चन्द्रमा हमारे नेत्रों का देवता है,** यह चन्द्रमा अमृत को बिखेरने वाला है, यह चन्द्रमा हमारा देवता है। ''आभ्याम् गतम् ब्रह्म लोकाम् अमृताम् देवम् ब्रह्म लोकाः।'' जब माता के गर्भस्थल में शिशु होता है, माता के गर्भस्थल में रसना के निचले विभाग में एक **'चन्द्रकेतु'** नाम की नाड़ी होती है, उस नाड़ी का सम्बन्ध माता की 'पुरीतत' नाम की नाड़ी से होता है और पुरीतत नाम की नाड़ी का सम्बन्ध माता की लोरियों से होता है और माता की लोरियों से पंचम नाड़ी बन करके चलती हैं और अमृत बहाने वाला चन्द्रमा है। बेटा! देखो, माता की नाभि से बालक का इन नाड़ियों से सम्बन्ध होता है, तो वहाँ अमृत प्रदान किया जाता है, वह कौन बना रहा है बेटा! वह कौन अमृत दे रहा है? मेरे प्यारे! वह चन्द्रमा है वह 'सोम' कहलाता है वह आभा में रमण करने वाला है। मुनिवरो! देखो, वह चन्द्रमा जो कान्ति बन करके 'रेणुका' को 'रेणुका' बना देता है। हमारे यहाँ मुनिवरो! देखो, रात्रि को प्रकाश में लाने वाला चन्द्रमा है। अमृत को बहा देता है नाना प्रकार की वनस्पतियाँ उसी से रसों का स्वादन लेती रहती हैं और नाना प्रकार का जो यह सोम चन्द्रमा, चन्द्रमा सोमरस बन करके समुद्रों को तपाता रहता है। समुद्रों से नाना प्रकार का जो 'सोम' उत्पन्न होता है उससे मेघ और मेघों से सुन्दर-सुन्दर वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। आओ मेरे प्यारे! देखो यह चन्द्रमा! हमारे नेत्रों का देवता है, **यह चन्द्रमा ही,**

अहा! अमृत को बहाने वाला है। एक नहीं प्रभु के राष्ट्र में नाना चन्द्रमा हैं। एक 'आकाश गङ्गा' में नाना चन्द्रमा हैं परन्तु वे चन्द्रमा रात्रि के प्रकाश में 'अमृत' को बहा देते हैं। तो मेरे पुत्रो! देखो! राजा पुनः मौन हो गए।

तारा मण्डलों का प्रकाश

राजा ने नतमस्तक हो करके कहा, प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ जब ये चन्द्रमा नहीं होता तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा, हे राजन्! जब ये चन्द्रमा नहीं होता तो हम नाना तारामण्डलों के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये तारामण्डलों का धीमा-धीमा प्रकाश आता रहता है उसी के प्रकाश से मानो पगडण्डियाँ प्राप्त कर लेता है। ये नाना प्रकार की आभा में, उज्ज्वलता में प्रगट होने वाले ये नाना तारामण्डल कहलाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, एक कैसी प्रिय माला बन रही है, उस माला को जो धारण कर लेता है, वह प्रियता को प्राप्त हो जाता है। मेरे पुत्रो! ऋषि कहता है, राजन्! ये जो नाना प्रकार के तारामण्डल हैं इनकी एक माला बनी हुई है। वह माला ही आभा में रमण करने वाली है। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा कि तारामण्डल एक नहीं, एक से एक विशाल कहलाते हैं। हे राजन्! तुम्हें यह प्रतीत है कि नाना पृथ्वियाँ 'सूर्य-मण्डल' में समाहित हो जाती हैं। यह जो सूर्य है, आरूणि मण्डल में ऐसे सहस्त्रों सूर्य समाहित हो जाते हैं। सहस्त्रों 'आरुणि' इस आभा में 'आभ्याम् गति' में 'ध्रुव' में समाहित हो जाते हैं। हे राजन्! तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए, जैसा यह ध्रुव है ऐसे-ऐसे सहस्त्र ध्रुव 'जेठाय नक्षत्र' में समाहित हो जाते हैं। जैसा जेठाय नक्षत्र है ऐसे-ऐसे एक सहस्त्र 'जेठाय नक्षत्र' देखो, 'अरुन्धति मण्डल' में ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसा 'अरून्धति मण्डल' है ऐसे-ऐसे एक सहस्त्र 'अरुन्धति पुष्य नक्षत्र' में ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसा 'पुष्य नक्षत्र' है ऐसे-ऐसे एक सहस्र 'पुष्य नक्षत्र' 'स्वाति

नक्षत्र' में ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसा 'स्वाति नक्षत्र' है ऐसे-ऐसे एक सहस्र 'स्वाति' 'अचंग' लोकों में ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसा 'अचंग' है वे 'ब्रह्मी' लोकों में ओत-प्रोत हो जाते हैं। बेटा! आज मैं प्रभु की प्रतिभा का वर्णन करने नहीं आया हूँ। प्रभु का विज्ञान इतना अनन्त है, इतना महान् है कि उसको मेरे प्यारे! कोई सीमा में वर्णन भी नहीं कर पाता। आज मैं तुम्हें वर्णन कराने आया हूँ कि ये नाना प्रकार के तारा मण्डलों का प्रकाश इस पृथ्वी मण्डल पर आता रहता है। इसी की आभा में मुनिवरो! देखो, प्रकाशमान हो जाता है उन्हीं का प्रकाश **मानव के नेत्रों का देवता यही तारा मण्डल बन जाता है।** नाना 'सौर-मण्डल' कहलाते हैं। एक 'आकाश-गङ्गा' में नाना 'सौर-मण्डलों की गणना की गई तो ऋषिवर क्या, वैज्ञानिकजन मेरे प्यारे! एक आकाश-गङ्गा के चन्द्रमा और सूर्यों की गणना भी पूर्ण रूप में नहीं कर पाये अब तक।

अग्नि का प्रकाश

आओ मेरे पुत्रो! आज मैं सौर-मण्डल में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रभु का विज्ञान कितना अनन्त है। ऐसा मुझे स्मरण आता रहता है कि राजा जनक ने जब ये सौर-मण्डलों की चर्चाएँ, लोकों की चर्चाएँ सुनी तो उस समय राजा जनक नतमस्तक हो करके बोले, प्रभु! मैं यह नहीं जानना चाहता हूँ। जब यह सौर-मण्डल अथवा ये तारा मण्डल नहीं होते जब हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा, हे राजन्! जब ये तारा मण्डल नहीं होते तो हम अग्नि के प्रकाश से ही प्रकाशमान हो जाते हैं, **यह अग्नि हमारे नेत्रों का देवता है।** अग्नि आभामय कहलाता है, यह अग्नि एक ही प्रकार की नहीं है। कहीं अग्नि वैश्वानर अग्नि बन करके प्रकाश दे रही है, कहीं अदिति बन करके प्रकाश दे रही है, कहीं द्यौ सूर्य बन करके प्रकाश दे रही है, कहीं दक्षिणाय अग्नि

कहलाती है, कहीं गृहपत्य नाम की अग्नि कहलाती है, कहीं गार्हपत्य कहलाती है। ये नाना प्रकार की अग्नियाँ प्रकाश दे रही हैं और प्रकाश दे करके वेद के ऋषियों ने, आयुर्वेदाचार्य ने तो अश्विनी कुमार जैसे **आयुर्वेदाचार्यों ने 85 प्रकार की अग्नि मानी है।** परन्तु जब विज्ञान के युग में प्रवेश करते हैं, विज्ञान में से एक-एक अग्नि में से जो तरङ्गें उत्पन्न होती हैं वे मेरे प्यारे! सहस्रों, अरबों-खरबों तरङ्गें हैं जो गणना में नहीं आतीं। मेरे पुत्रो! देखो, अरबों-खरबों तरङ्गों वाली यह अग्नि है जो मेरी प्यारी माता, अन्धकार छाया हुआ है गृह को प्रकाशित करती है, वह गृह में इसी अग्नि से प्रकाश को प्राप्त कर अपना व्यापार प्रारम्भ कर लेती है। वह नेत्रों की अग्नि बन करके वे **चक्षु-मित्र अग्नि** कहलाती है।

मेरे प्यारे! वह अग्नि ही मानव जीवन का क्या वह अग्नि ही इस संसार में लौकिक अग्नि बन करके प्रकाश देती है और वही अग्नि मेरे प्यारे! द्यौ सूर्य बन करके सूक्ष्म बन जाती है। वही अग्नि वाणी बन करके मानव को अग्रणीय बना देती है। मेरे प्यारे! देखो अग्नि के भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप माने गए हैं। जब ऋषि ने राजा के समीप अग्नि की भिन्न-भिन्न प्रकार की मीमाँसाएँ कीं तो मेरे प्यारे! देखो, 'अग्रणम् देवाः अग्निश्चतम् देवोः।

वाणी का प्रकाश

उस समय उन्होंने कहा, हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ जब ये अग्नि भी नहीं होती तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा, हे राजन्! जब ये अग्नि नहीं होती, उस समय हम इस 'वाक्य' के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये 'वाक्यमयी' जो ज्योति है यह विशाल-ज्योति कहलाती है। एक मानव अन्धकार में चला जा रहा है, मार्ग में चला जा रहा है। मार्ग से कुमार्ग को चल देता है।

जब यह कुमार्ग के अन्धकार में चला जाता है भयङ्कर वन में, उस समय वह कहता है, ''अरे! हे कोई हमें चेताने वाला? उस समय मार्ग में जो मानव स्थिर है वो कह रहा है, आ जाओ। मैं मार्ग में स्थिर हूँ।'' तो मुनिवरो! देखो, वह उस वाणी के प्रकाश से उसी मार्ग का पथिक बन जाता है जिस मार्ग से वह मानव विचलित हो गया है जिस मार्ग से, जिस पथ से वह कुपथ बन गया है। तो मेरे प्यारे! वह वाणी का प्रकाश है। एक मानव को अज्ञान छा गया है वाणी से एक मानव उसको शिक्षार्थी बन करके शिक्षा दे रहा है। यह वाणी का प्रकाश है, वह उस हृदय के, हृदय रूपी अन्धकार को त्याग करके प्रकाश के मार्ग पर चला जाता है, वह अपने पथ को प्राप्त कर लेता है। मेरे पुत्रो! जब उन्होंने ऐसा वर्णन किया कि 'वाङ्मय-ज्योति' देखो, ब्राह्मण वाणी से कहलाता है, यह ब्राह्मण वाक्य पवित्र होता है। यह वाक्य ही है मेरे प्यारे! **जितना दार्शनिक शब्द होता है, वाक्य होता है, वही मेरे प्यारे! देखो, अन्तरिक्ष में विद्यमान होता है।**

मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! देखो **उद्दालक गोत्र में वृण-केतु ऋषि महाराज एक समय याग कर रहे थे** और जब वे याग कर रहे थे, याग के सूक्ष्म परमाणुओं को वो एकत्रित करते हुए, उनसे यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे। उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया जिस यन्त्र में उनका चित्र उन्हें दृष्टिपात आने लगा। उन्होंने आगे अनुसन्धान किया तो आगे आने वाले उन्हें कुछ चित्रों के दर्शन होने लगे उसी यन्त्र में और यन्त्र का विकास किया **''चित्रावली व्रणकेतु''** यन्त्र था। उनके शब्द अन्तरिक्ष में विद्यमान रहते हैं क्योंकि शब्द सदैव नित्य रहने वाला है। अन्तरिक्ष में वह गति करता रहता है और अन्य शब्दों के साथ मे गति करता है। तो अपने सौवें महापिता के दर्शन होने लगे। प्यारे! आज मैं तुम्हें विज्ञान के युग में ले जाना नहीं चाहता हूँ। वाक्य यह प्रगट कर रहा था कि 'वाक्य' के प्रकाश से मानव

प्रकाशित होता है। वाक्य से मानव अन्धकार से अन्धकार को त्याग करके प्रकाश में चला जाता है। मेरे पुत्रो! जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने वाक्य की बहुत मीमाँसा की। मीमाँसा करने के पश्चात् मेरे पुत्रो! देखो, उसके पश्चात् ऋषि कहता है। ''वृह्मणम् ब्रह्मणाः कृतम् लोकाम् हिरण्यमृथा दिव्यम् लोकाः।''

आत्मा का प्रकाश

उन्होंने कहा, हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ जब ये वाक्य भी नहीं होता तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? उन्होंने कहा, हे राजन्! जब वाक्य नहीं होता तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? यह तुम जानना चाहते हो। जब यह सूर्य भी नहीं होता, चन्द्रमा भी नहीं होता, तारामण्डल भी नहीं होते, अग्नियाँ भी नहीं होतीं और वाक्य भी नहीं होता, तो हे राजन्! हम इस आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। यह आत्मा हमारे शरीर में गति करता रहता है। यह आत्मा प्रकाश का देने वाला है। 'आत्म-त्तत्व' जब तक इस मानव शरीर में रहता है तब तक मानव गति करता रहता है, वो गतिशीलता है। जब यह आत्मा शरीर से निकल जाता है उस समय यह मानव का शरीर 'शव' रह जाता है। हे राजन्! जब मानो, देखो शव रह जाता है। यह मानव का शव है नेत्रों के गोलक में भी नेत्र ज्यों के त्यों बने हुए है, परन्तु सूर्य प्रकाश दे रहा है। अरे! मानव क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? चन्द्रमा अपनी 'सोम' वृष्टि कर रहा है, रसना ज्यों की त्यों बनी हुई है। इस मानव शव में नेत्र भी ज्यों के त्यों हैं। अरे मानव! क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? तारा मण्डलों की माला उसी प्रकार निर्मित हो रही है, प्रभु का विज्ञान उसके साथ-साथ है। परन्तु देखो! एक आत्मा नहीं है इस मानव शरीर में। अरे मानव! क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? बेटा! वाक्य भी है, अग्नि भी है परन्तु क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाते? इसीलिए बेटा! **वेद के ऋषि ने, आचार्यों ने,**

दार्शनिकों नें कहा है कि हमारे जो नेत्र हैं वे आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं।

इसीलिए हे मानव! तुम इस आत्मा को जानने का प्रयास करो क्योंकि सँसार में जैसे प्रातःकाल से लेकर सायँकाल तक तुम उदर की पूर्ति का प्रयास करते रहते हो, उदर की पूर्ति करने का प्रयास, उसे भरण करने का। अरे मानव! इस आत्मा को भी तो भोजन देने का प्रयास करो, आत्मा को भी तो भोजन दो! आत्मा का भोजन क्या है? बेटा! सत्सँग है, आत्मा का भोजन क्या है? प्रभु का चिन्तन करना है। आओ मेरे प्यारे! हम इस आत्मा को जानने का प्रयास करें। अरे! न यह आत्मा जागृत है, न स्वप्न है, न सुषुप्ति है। अरे! यह आत्मा है क्या बेटा? आज विचारा जाता है, विचारने से प्रतीत होता है–यह आत्मा न जागरुक, **जब ये मानव जागरुक रहता है तब आत्मा का प्रकाश मानव के नेत्रों के समीप रहता है।** नेत्रों से विभाजन करता रहता है। एक मानव अहा! देखो, अपने कुटुम्ब का परिचय देता है– ये मेरी माता है, ये पिता है, यह पुत्री है, यह पुत्र है, यह पौत्र है, यह प्रपौत्र है, कुटुम्ब का परिचय दे रहा है। अरे! वो कहाँ से दे रहा है? आत्मा का प्रकाश मन के ऊपर प्रतिभा और मन का सम्बन्ध नेत्रों से है। विभक्त करने वाला यह 'मनस्तत्त्व' माना गया है परन्तु प्रकाश आत्मा का आ रहा है।

मन, प्राण और आत्मा

मेरे प्यारे! देखो जब यह जागरूक क्या स्वप्न में चला जाता है, अरे इस मानव के शरीर में राष्ट्र नहीं होते, स्वप्न में राष्ट्रों का निर्माण हो जाता है। परन्तु पत्नियाँ नहीं होतीं, पत्नियों का निर्माण हो जाता है, पति नहीं होते पतियों का निर्माण हो जाता है, नद-नदियाँ नहीं होते, समुद्र नहीं होता, परन्तु इन सबका निर्माण हो जाता है। वह निर्माण

करने वाला कौन है? स्वप्न में, बेटा! यह मन देखो चित्त में जो नाना प्रकार से सूक्ष्म अकुँर विद्यमान होते है और वे करोड़ो-करोड़ो जन्मों के होते हैं, करोड़ों जन्मों के जो सँस्कार चित्त में विद्यमान होते हैं, मन के समीप होते हैं। मेरे प्यारे! आत्मा प्रतिभा, आत्मा के प्रकाश से यह मन उन सूक्ष्म अँकुरों को साकार रूप में दर्शन करता हुआ यह भोक्ता बन जाता है यह भोगता रहता है। मानव, नदी, नदियाँ शरीर में नहीं होते परन्तु उनका निर्माण कर लेता है, यह मन ही तो निर्माण करता है आत्मा के प्रकाश में। बेटा! यह आत्मा देखो यह सुषुप्ति भी नहीं है। सुषुप्ति किसे कहते हैं? मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार मेरे प्यारे! अपनी साम्य अवस्था में चले जाते हैं उस समय बेटा! आत्मा 'प्रणामं उब्रहे देवतम् लोकाः' यह प्राण के साथ में आत्मा गति करने लगता है और यह मन अपने कुटुम्ब को ले करके यह सुषुप्ति में चला जाता है। बेटा! उस समय मन ऐसा मान लेता है, आज मैं ऐसा आनन्दवत् हो गया कि मुझे संसार का ज्ञान नहीं रहा। बेटा! उसे सुषुप्ति कहते हैं–मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार अपनी साम्यावस्था में जाने का नाम सुषुप्ति कहलाता है। उस समय कौन जागता रहता है? प्राण और प्राण के साथ में आत्मा का तारतम्य प्रत्येक श्वास के साथ में बेटा! 'आत्म-तत्त्व' विराजमान है। मेरे प्यारे! प्रति श्वास 'प्राणस्वम् ब्रहेः' प्राण की ध्वनि हो रही है बेटा! यह आत्मा न जागरूक है, न स्वप्न है, न सुषुप्ति है। यह आत्मा तो बेटा! **तुरीयावस्था** में भी भिन्न-भिन्न प्रकार की अवस्था मानी जाती है। उन अवस्थाओं में मेरे प्यारे! देखो, योगेश्वर वैखरी वाणी भी प्रगट करने लगता है। आज मैं तुरीयावस्था का वर्णन करने नहीं आया हूँ।

विचार यह देने के लिए आया हूँ कि आत्मा बेटा! एक रस रहने वाला चेतन है जो शरीर में भास रहा है अथवा गति कर रहा है। जिस आत्मा के रहने से यह मानव शरीर कहलाता है, चेतनित कहलाता है,

आत्मा से निकल जाने से मेरे प्यारे! देखो यह मानव का शरीर शव रह जाता है।

आओ मेरे प्यारे! जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ सब मीमाँसा राजा के समीप की तो राजा और उनकी पत्नि प्रसन्न हो गए। उन्होंने कहा, धन्य है प्रभु! आपने हमारे ज्ञान के चक्षु आभा में परणित कर दिए हैं। आज हमें यह ज्ञान हुआ है कि वास्तव में आत्मा क्या है? हम आत्मा के प्रकाश से हीं प्रकाशमान होते हैं मानव के, नेत्रों के प्रकाश का जो मूल है उस मूल में आत्मा है और आत्मा के घेरे में बेटा! यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड कहलाता है। आओ मेरे प्यारे! देखो, आज हम जब आत्मा के प्रसंग से मध्यम ले लेते हैं तो यह भौतिकवाद आता है और भौतिकवाद 'वाक्-ज्योति' से समाप्त हो करके, शब्द नित्य से समाप्त हो करके, बेटा! वहाँ से आत्मा का विज्ञान प्रारम्भ होता है। आत्मा के विज्ञान में जब मानव प्रवेश करता है तो धन्य हो जाता है, वह मृत्यु से पार हो जाता है। आओ मेरे प्यारे! देखो उसे सँसार का भय नहीं होता, वह इससे रहित हो जाता है।

आत्म तत्त्व को जानने की प्रेरणा

मेरे पुत्रो! देखो, राजा जनक को ऋषि ने ये मीमाँसा प्रकट की। महत्ता प्रकट करने के पश्चात् ऋषिवर मौन हो गए। जब ऋषि मौन हो गए तब 'अव्रतम् देवाः' राजा ने कहा प्रभु! धन्य है। आपने मेरे ज्ञान चक्षुओं को गुणित कर दिया है, मुझे जागरूक कर दिया है, मैं अज्ञान में था, अन्धकार में था। वेद प्रकाश में लाने का आपने मुझे प्रयास किया है। आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। हमें इस आत्मा को जानना चाहिए क्योंकि आत्मतत्त्व ही एक ऐसा है जो मानव को अज्ञान से दूर कर सकता है। अन्यथा भौतिकवाद के नाना प्रकार के पद्रार्थों में नाना प्रकार के अणु, महाअणु, त्रसरेणुओं में रमण

करता रहता है। प्रकृति के तत्त्वों को जानना है उनसे उपस्थित हो जाता है। एक तरँग को जाना दूसरी तरँगे उपस्थित हो जाती है, एक परमाणु जाना द्वितीय परमाणु उपस्थित है। यन्त्र का निर्माण किया, दूसरे यन्त्र की इच्छा बनी रहती है। परन्तु देखो केवल विज्ञान के ज्ञान से बेटा! वैज्ञानिक समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकृति आभा को वे नहीं जान पाते क्योंकि प्रकृति के गर्भ के मूल में चेतना है और वह चेतना प्रभु है। इसीलिए बेटा! देखो प्रभु और आत्म-तत्त्व को जानने से सर्वत्र जाना जाता है और इनके न जानने से कुछ नहीं जाना जाता।

यह है बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा मैं बेटा! शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। आजका वाक्य हमारा अब समाप्त होने जा रहा है। **आज का वाक्य हमारा यह कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, अपनी आत्मा को जानते हुए इस सँसार-सागर से पार हो जाएँ।** यह है बेटा! आजका वाक्य। आज के वाक्य अब हमारे समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

वेदपाठ. . . . . .

अच्छा भगवन्! आज्ञा

आनन्द मंगलम्

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक : 15 जुलाई, 1979

स्थान : श्री महेन्द्रसिंह भाटी व
श्री हीरासिंह
ग्राम घंघौला, बुलन्दशहर

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. सँसार में मानव के लिए तीन वस्तुएँ विचारने की हैं सबसे प्रथम प्रकृति है, द्वितीय आत्मा है और तृतीय ब्रह्म को माना है।
2. आत्मा के लिए सँसार रचा जाता है रचने वाला प्रभु है और रची जाने वाली प्रकृति है।
3. मोक्ष के तुल्य (मोक्ष प्राप्ति के समीप पहुँची हुई) आत्मा होती हैं वे अपने शरीरों को धारण कर लेती हैं।
4. प्रकृति का यदि कोई सूक्ष्म तत्व है तो वह मन है उसे विश्वभान मन भी कहा जाता है।
5. ऋषियों ने कहा कि मन जितना पवित्र होगा, मन जितना शोधित किया हुआ होगा, मानव की उतनी मानवीयता का यौगिक दर्शन होता है।
6. इस स्थूल शरीर के लगभग चालीस जगत् माने गए हैं और सूक्ष्म शरीर के भी लगभग साठ जगत माने गए हैं।
7. संस्कारों के न रहने का नाम मोक्ष कहा जाता है।
8. वह परमात्मा इस आत्मा का सखा है।
9. जो आत्मवेत्ता पुरुष होते हैं, जो आत्मा को जान लेते हैं उनके सम्पर्क में जाने से मानव का हृदय परिपक्व होता है।
10. जहाँ भौतिकवाद समाप्त होता है वहाँ आध्यात्मिक का प्रारम्भ होता है।
11. मानव को उस मार्ग को अपना लेना चाहिए, जिस मार्ग से महापुरुष प्रायः करते चले आए हों। वही मार्ग हमारे लिये श्रेष्ठ है।
12. प्रकृति का कण-कण ओ३म् रूपी धागे में पिरोया हुआ है।
13. मानव के शब्दों के परमाणुओं में मानव चित्र भी आकाश में प्रसारित होता रहता है।

Creation, and the Institution of National Order

O, Sages ! Rama set out to conquer Lanka, reached the shore where he met Nal and Neel, two great engineers of the age. They helped Rama in building a bridge across the sea. The news about Rama's approach to Lanka was conveyed to Ravana.

O, Sages ! Ravana summoned his brother Vibhishan. After a long discussion Ravana asked, "Brother ! you are a devotee of God and Chant 'OM' constantly. I would like to know whether I shall be able to defeat Rama or not." Vibhishan replied, "O, Ravana; Even if you take sevaral births, you would not be able to register a victory over Rama." Ravana said, "I am an eminent scientist and have inventions of several nuclear weapons to my credit." Vibhishan replied, "Brother ! Rama possesses both spiritual wisdom and scientific knowledge and, by virtue of these, he can conquer you. "Ravana then asked as to what he should do. At this Vibhishan replied, "Brother, if you hear my advice, hasten to take Sita to Rama". When Ravana heard these words uttered by his brother, he got enraged and kicked him 'off' and ordered him to quit Lanka. Vibhishan crossed the bridge and met Rama and explained to him at length what had happend.

Rama's yogic wisdom

One day Rama spoke to Vibhishan, "Brother" ! I would like to know whether I shall able to gain victory over Ravana. "Vibhishan replied, "Rama ! It is no trifle to defeat Ravana." Rama asked for the reason. Vibhishan said, "Ravana's son Narayantak is a great scientist of this age. He has devised many weapons of war. Ravana's god-father Maharaja Shiva, the Lord of Kailash, is at his back. Besides Ravana himself is very powerful in evey respect. So it will not be easy to subjugate him. "Rama then expressed his resolve to conquer Ravana at all costs. After thinking for a while Vibhishan said, "Rama, I can well realise your spiritual powers. Spiritual science can perform miracles. It can transform a foe in to a friend or a

wicked person in to a saint. You can very well utilize this Yoga to your advantage against Ravana. I am sure that you will overcome Ravana. Though he is a great scholar of Vedas, and a great man of Science, yet you, with your spiritual and Yogic superiority, can easily subjugate him. But, for that end, you should perform the 'Ajay-Medh Yajna' and invite Raja Shiva and also request Ravana, who is the only person capable of acting as the Brahma (Head priest) of the proposed Yajna. If it materializes, your victory is more than assured. Rama asked as to how it could be possible for his adversary to oblige him by accepting the invitation and, further more, to act as Brahma. Thereupon Vibhishan said, "My beloved Rama ! Ravana has implicit devotion for this yajna due to his dedicted association with Lord Shiva. In addition to all that, you may also exercise your spiritual charm upon Ravana for readily accepting your invitation. If he so accepts the exalted seat of Brahma at the Yajna, he will perform the rituals in accordance with the Vedic traditions discarding his personal self-centred motives. In that case your victory is assured."

Rama's invitation to Ravana to performs the Yajna

O, sages ! According to Vibhishan's advice, Rama and Lakshmana both went in disguise to Ravana who was, at that time, holding his court in his royal palace. After observing for a while Rama expressed to Lakshmana, "O, Lakshmana ! Look! How just is Ravana in redressing the grievances of his subjects! He deserves praise. Now how to extend our invitation to him?"

There came a moment of repose. Rama and Lakshmana availed of it and approached Ravana. Ravana looked at the distinguished strangers. His eyes met with those of Rama. Rama's eyes radiated charm. Ravana's heart was captivated. Qute unconscious of it, he was under Rama's Yogic spell.

Ravana failed to recognise Rama and Lakshmana. Extending formal courtesy, Ravana said, "Say Sire ! How have you happened to come ? What is your requirement" ? Rama said, "Sire ! We have resolved to perform Ajaya Medh

Yajna. We request that you may kindly accept to act as 'Brahma' at this 'sacrifice'. Ravana could not but accede to the request and assured Rama and Lakshmana that their will would be done. Rama then added, "Sire ! The Yajna is being performed at the sea-shore.We are glad that you have accepted the invitation. Tomorrow we may not be able to come again. You please be kind enough to reach the place yourself. Ravana promised to do as desired.

Ravana performs Rama's Ajay medh Yajna

Look sages ! All the preliminaries for the Yajna were made. A grand Yajna-shala was set up. At the appointed hour Ravana was anxiously awaited. Ravana arrived in his plane and was received most respectfully by the hosts. He was exalted to the seat of Brahma by Rama according to the Vedic rites. After being made Brahma, when the sacred thread ceremony was to take place, Ravana asked for who was who. At that time they said, "Sire ! I am called Rama; I am called Lakshmana." When they thus disclosed their identities, Ravana was taken aback and exclaimed, " Oh ! What is this ? It has been a very strange thing." Soon he reconciled with himself, " Oh ! Let it be. Come what may. When they have honoured you to be the Brahma, it becomes your duty to perform the Yajna, according to the prescribed procedure." He said, " Thank you ! But where is your consort'? At this Rama replied, "Sire ! My consort is in your custody in Lanka." Sages ! At that time Ravana said to himself. "If I do not conduct the Yajna in order, I shall commit a great sin against God. They (Rama and Lakshmana) have made me the Brahma for the Yajna. God has given me tha wisdom to do it under the conditions, my only duty remains to bring Sita and perform the Yajna according to Vedic tradition".

Ravana brings Sita to Rama's Yajna

O Sages ! Ravana left for Lanka in his plane and went straight to Sita. He said, "O Sita: Your husband is performing a Yajna and you are required to go to the seashore." She then observed, "O, Ravana ! You are always telling me some lie or

the other. Why do you not ever speak a little truth also ?" "No, no, Sita ! I have been appointed as Brahama of the Yajna by your husband. It has therefore, become obligatory on my part to carry you over there since the Yajna can not be accomplished by Rama in the absence of his consort as per the Vedic dictates." Ravana said assuredly. When Sita heard this version, she was very much pleased and readily accompanied Ravana in the plane to the Yajna site. Having arrived there, Sita took her seat on Rama's right side quite joyfully at the Yajna 'Vedi'. Ravana occupied the Brahma's seat on the southern side. The Yajna started in full swing. As witnessed and described by Maharshi Valmiki and Maharishi Lomash Muni, the Yajna continued successfully.

Look sages; when the final offering to sacred fire was nearing, Sita asked Rama, "You are peforming the Yajna no doubt. But do you have anything substantial to offer to Ravana in 'Dakshina' (recognition for the service) or not ?" Rama said to Sita, "O, Sita ! What have I got with me to offer to him ?"

At that time, Look ! What Sita did. She had a 'Kauri-Joora' (an ornament) with her. She passed it on to Rama and said, "Lord keep it with you. You may honour the Brahma (Ravana) with it. Rama accepted it for the purpose.

The Yajna continued. After the final offering to the sacred fire; due regards and greetings were paid and exchanged. Rama and Sita approached Ravana with that 'Kauri-Joora'. Ravana siad, "O, Rama ! It looks as if this Kauri-Joora belongs to Sita." Sita thereupon observed, "Sire ! What is my own in that Kauri Joora ? It is going for a noble cause. It was, at one time, presented to me as an ornament by my father-in-law, Dashratha. Today it is being offered to you for a noble cause. I have no sense of mineness attached with it, At that time Ravana siad, "O, Sita ! This offering of yours is acceptable to me but I do not want to deprive you of the sacred symbol of feminine chastity.

Pujyapad Gurudev

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	60.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	50.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएं	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
70.	ईश्वर मिलन	50.00
71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
13. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
14. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
15. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
16. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से प्राप्त नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ-साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

सूचना

सभी आजीवन/वार्षिक सदस्यों को 'यौगिक प्रवचन' पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी भी सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में अपने पोस्ट मैन से एक सप्ताह के समय में जानकारी करें और फिर भी न मिलने की स्थिति में अपने सम्बन्धित पोस्ट ऑफिस में इस विषय में लिखित एक प्रार्थना-पत्र पोस्ट मास्टर साहब को दें जिससे कि पत्रिका न मिलने की खोज-बीन डाक विभाग द्वारा कराके आपकी पत्रिका आपको समय पर मिलनी प्रारम्भ हो जाए। कृपया प्रार्थना-पत्र की एक प्रति पर डाक विभाग द्वारा प्राप्ति के हस्ताक्षर व मोहर लगवाकर हमें भी भेज देवें जिससे कि इस विषय में यहाँ भी डाक विभाग को अवगत करा दिया जाए।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है :-

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

website : www.shringirishi.in

Email : contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हम परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुए यज्ञशाला में परिणत होते हुए अपने विचारों का यज्ञ करते चले जाएँ। नाना प्रकार का संकल्प के साथ में हमारा एक मानसिक संकल्प हो, प्राण का ही उसमें निदान हो, उसके पश्चात् जब हम उसमें आहुति देते हैं तो वह आहुति द्यौ लोक को प्राप्त होती है। देवतागण उसको प्राप्त करते हैं और देवता जब तृप्त होते हैं तो राष्ट्रवाद को क्या, समाज को पवित्र बनाते चले जाते हैं। परमाणुवाद को ऊँचा बनाते चले जाते हैं। क्योंकि यह जितना जगत है यह सब परमाणुओं की ही रचना है। द्यौ लोक का जो घृत है उसमें कितने सूक्ष्म परमाणु होते हैं, और वह परमाणु जब अग्नि-उद्‌गाता बन करके और वायु अध्वर्यु बन करके जब उसका साकल्य उसमें प्रदान किया जाता है तो द्यौ लोक में कितनी महान गति होती है, कितना मानव का हृदय स्वच्छ और पवित्र होता है, ममता से रहित होता है, नाना प्रकार की विडम्बनाओं से रहित होता है उतना ही द्यौ लोक को मानव का संकलन प्राप्त होता चला जाता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव